Inshallah Khan Insha (1803)
रानी केतकी की कहानी

यह एक कहानी है कि जिसमें हिनदी छुट।
और न किसी बोली का मेल है न पुट।।

सिर झुकाकर नाक रगड़ता हूँ इस अपने बनानेवाले के सामने जिसने इस सब को बनाया और बात की बात में वह कर दिखाया कि जिसका भेद किसीने न पाया। आतियाँ-जातियाँ जो साँसें हैं उसके बिन ध्यान यह सब फाँसे हैं। यह कल का पुतला जो अपने उस खेलाड़ी की सुध रक्खे तो खटाई में क्यों पड़े और कड़वा-कसैला क्यों हो। उस कल की मिठाई चक्खे जो बड़े-से बड़े अगलों ने चकखी है।

देखने को दो आँखें दीं और सुनने को दो कान।
नाक भी सब में ऊँची कर दी मरतों को जी दान।।

मिट्टी के वासन को इतनी सकत कहाँ जो अपने कुम्हार के करतब कुछ ताड़ सके। सच है, जो बनाया हुआ हो, सो अपने बनानेवाले को क्या सराहे और क्या कहे। यों जिसका जी चाहे, पड़ा बके। सिर से लगा पाँव तक जितने रोंगटें हैं, जो सबके सब बोल उठें और सराहा करें और उतने बरसों उसी ध्यान में रहें, जितनी सारी नदियों में रेत और फूल फलियाँ खेत में हैं, तो भी कुछ न हो सके, कराहा करैं। सिर झुकाने के साथ ही दिन रात रगड़ता हूँ उस अपने दाता के भेजे हुए प्यारे को जिसके लिए यों कहा है – जो तू न होता तो मैं कुछ न बनाता - और उसका चचेरा भाई जिसका ब्याह उसके घर हुआ, उसकी सूरत मुझे लगी रहती है। मैं फूला अपने आप में नहीं समाता, और जितने उनके लड़के-बाले हैं, उन्हीं को मेरे जी में चाह है। और कोई कुछ हो, मुझे नहीं भाता। मुझको उस घराने छुट किसी चोर ठग से क्या पड़ो ! जीते और मरते आसरा उन्हीं सभों का और उनके घराने का रखता हूँ तीसों घड़ी।

डौल डाल एक अनोखी बात का

एक दिन बैठे-बैठे यह बात अपने ध्यान में चढ़ी कि कोई कहानी ऐसी कहिए कि जिसमें हिंदवी छुट और किसी बोली का पुट न मिले, तब जाके मेरा जी फूल की कली के रूप में खिले। बाहर की बोली और गँवारी कुछ उसके बीच में न हो। अपने मिलनेवालों में से एक कोई बड़े-बड़े पढ़े-लिखे, पुराने-धुराने, डाँग, बूढ़े घाग यह खटराग लाए। सिर हिलाकर, मुँह थुथाकर, नाक भौं चढ़ाकर, आँखें फिराकर लगे कहने – यह बात होते दिखाई नहीं देती। हिंदवीपन भी न निकले और भाखापन भी न हो। बस जैसे भले लोग अच्छों से अच्छे आपस में बोलते चालते हैं, ज्यों का त्यों सब डौल रहे और छाँह किसी की न हो, यह नहीं होने का। मैंने उनकी ठंडी साँस का टहोका खाकर झुँझुलाकर कहा – मैं कुछ ऐसा बढ़-बोला नहीं जो राई का परबत कर दिखाऊँ और झूठ सच बोलकर उँगलियाँ नचाऊँ। जो मुझसे न हो सकता तो यह बात मुँह से क्यों निकालता ?

इस कहानी का कहनेवाला यहाँ जताता है और जैसा कुछ उसे लोग पुकारते हैं, कह सुनाता है। दहना हाथ मुँह पर फेरकर आपको जताता हूँ, जो मेरे दाता ने चाहा तो यह ताव-भाव, ताव-चाव और कूद-फाँद, लपट-झपट किखाऊँ जो देखते ही आप के ध्यान का घोड़ा, जो बिजली से भी बहुत चंचल अचपलाहट में है, हिरन के रूप में अपनी चौकड़ी भूल जाय।

टुक घोड़े पर चढ़के अपने आता हूँ मैं
करतब जो कुछ है, कर दिखाता हूँ मैं।।
उस चाहनेवाले ने जो चाहा तो अभी।
कहता जो कुछ हूँ, कर दिखाता हूँ मैं।।

अब आप कान रख के, आँखें मिला के, सन्मुख होके टुक इधर देखिए, किस ढब से बढ़ चलता हूँ और अपने फूल की पंखडी जैसे होठों से किस-किस रूप के फूल उगलता हूँ।

कहानी के जोबव का उभार और बोलचाल की दुल्हिन का सिंगार

किसी देश में किसी राजा के घर एक बेटा था। उसे उसके माँ-बाप और सब घर के लोग कुँवर उदैभान करके पुकारते थे। सचमुच उसके जोबन की जोत में सूरज की एक सोत आ मिली थी। उसका अच्छापन और भला लगना कुछ ऐसा न था जो किसी के लिखने और कहने में आ सके। पंद्रह बरस भरके उनने सोलहवें में पाँव रखा था...

लल्लू जी लाल *प्रेम सागर*
चौबीसवाँ अध्याय

श्रीशुकदेवजी बोले कि जब श्रीकृष्ण जमुना के पास पहुँच रुख तले लाठी टेक खड़े हुए, तब सब ग्वाल बाल औ सखाओं ने आय कर जोड़ कहा कि महाराज, हमैं इस समय बड़ी भूख लगी है, जो कुछ लाये थे सो खाई पर भूख न गई। कृष्ण बोले – देखो वह जो धुआँ दिखाई देता है तहाँ मथुरिये कंस के डर से छिपके यज्ञ करते हैं, उनके पास जा हमारा नाम ले दंडबत कर हाथ बाँध खड़े हो, दूर से भोजन ऐसे दीन हो मांगियो, जैसे भिखारी अधीन हो माँगना है।

यह बात सुन ग्वाल चले चले बहाँ गये जहाँ माथुर बैठे यज्ञ कर रहे थे। जाते ही उन्होंने प्रनाम कर निपट आधीनता से कर जोड़ के कहा – महाराज, आपको दंडवत कर हमारे हाथ श्री कृष्णचंद्रजी ने यह कहला भेजा है कि हमको अति भूख लगी है, कुछ कृपा कर भोजन भेज दीजे। इतनी बात ग्वालों के मुख से सुन मथुरिये क्रोध कर बोले – तुम तो बड़े मूर्ख हो जो हमसे अभी यह बात कहते हो। बिन होम हो चुके किसी को कुछ न देंगे। सुनो जब यज्ञ कर लेंगे और कुछ बचेगा सो बाँट देंगे। फिर ग्वालों ने उनसे गिड़गिड़ा के बहुतेरा कहा कि महाराज, घर आये भूखे को भोजन करवाने से बड़ा पुण्य होता है, पर वे इनके कहने को कुछ ध्यान में न लाये, वरन इनकी ओर से मुँह फेर आपस में कहने लगे।

बड़े मूढ़ पशुपालक नीच। माँगत भात होम के बीच।।

तब तो ये वहाँ से निरास हो अछतोय पजताय श्रीकृष्ण के पास आय बोले – महाराज, भीख माँग मान महत गँवाया, तौ भी खाने को कुछ हाथ न आया। अब क्या करें। श्रीकृष्णजी ने कहा किअब तुम तिनकी स्त्रियों से जा माँगों, वे बड़ी दयावंत धर्मात्मा हैं, उनकी भक्ति देखियो, वे तुम्हें देखते ही आदर मान से भोजन देंगी। यों सुन ये फिर वहाँ गये जहाँ वे बैठी रसोई करती थीं। आते ही उनसे कहा कि बन में श्रीकृष्ण को धेनु चराते क्षुधा भई है सोहमें तुम्हारे पास पठाया है, कुछ खाने को होय तो दो। इतना बचन ग्वालों के मुख से सुनते ही वे सब प्रसन्न हो कंचन के थालों में षटरस भोजन भर ले ले उठ धाईं और किसी की रोकी न रुकीं।

सदल मिश्र
चंद्रावती अथवा नासिकेतोपाख्यान (१८०३)

सकल सिद्धिदायक को वो देवतन में नायक गणपति को प्रणाम करता हूँ कि जिनके चरण-कमल के स्मरण किए ऐसे विघ्न दूर होता है औ दिन-दिन हृदय में सुमति उपजती वो संसार में लोग अच्छा-अच्छा भोग-बिलांप कर सबसे धन्य-धन्य कहा अंत में परम-पद को पहुँचते हैं किजहाँ इंद्र आदि देवता सब भी जाने को ललचाते रहते हैं।

दोहा

गणपति चरण सरोज द्वौ, सकल सिद्धि को राश।
बंदन करि सब होत है, पूरण मन की आश।।

चित्र विचित्र, सुंदर-सुंदर, बड़ी-बड़ी अटारिन से इंद्रपुरी समान शोभायमान, नगर कलिकत्ता महा प्रतापी वीर नृपति कंपनी महाराज के सदा फूल फला रहे कि जहाँ उत्तम-उत्तम लोग बसते हैं औ देश-देश से एक से एक गुणी जन आय आय अपने अपने गुण को सुफल करि बहुत आनंद में मगन होते हैं।

नाम सुन सदल मिश्र पंडित भी वहाँ आन पहुँचा वो बड़ी बड़ाई सुनि सर्वविद्या-निधान ज्ञानवान, महा-प्रधान श्री महाराज जान गिलकृस्त साहब से मिला कि जो पाठशाला के आचार्य हैं। तिनकी आज्ञा पाय दो एक ग्रंथ संस्कृत से भाषा वो भाषा से संस्कृत किए।

अव संवत् १८६० में नासिकेतोपाख्यान को कि जिसमें चंद्रावती की कथा कही है,, देव वाणी से कोई समझ नहीं सकता, इसलिए खड़ी बोली में किया। तहाँ कथा का आरंभ इस रीति से हुआः

एक समय राजा जनमेजय गंगा के तीर पर बारह बरस यज्ञ करने को रहे। एक दिन स्नान पूजा करि ब्राह्मणों को बहुत सा दान दे, देवता पितरों को तृप्त करके ऋषि और पंडितों को साथ लिए बैशंपायन मुनि के पास जा, दंडवत कर खड़े हो, हाथ जोड़ कहने लगे कि "महाराज,! आप वेद-पुराण सब शास्त्र के सार जाननिहार, तिस पर व्यास मुनि के शिष्य, सब योगियों में इंद्र समान हो। ऐसी कथा कि जिसके सुनने से पाप कटे और कोई रोग न होय, भर जन्म संसार में अच्छा भोग, अंत में मुक्ति मिले, हमसे कहिए।"